मोहम्मद यूनुस को नोबेल पुरस्कार

ग़रीबी का न्यापार और उसका पुरस्कार

● अभिनव

अभी हाल ही में बंगलादेश के बैंकर डा. मोहम्मद यूनुस और उनके बैंक को शांति का नोबेल पुरस्कार (अर्थशास्त्र का नोबेल क्यों नहीं!!??) दिया गया। इस पर तीसरी दुनिया के देशों के बुद्धिजीवियों ने काफ़ी खुशियाँ मनाईं। यह भी कहा गया कि बंगलादेश के किसी व्यक्ति को नोबेल पुरस्कार मिलना तीसरी दुनिया के देशों के लिए गर्व की बात है। लेकिन सोचने की बात यह है कि यह नोबेल पुरस्कार मोहम्मद यूनुस को क्यों दिया गया? आख़िर ये "सूक्ष्म ऋण" है क्या? ग़रीबी हटाने में मोहम्मद यूनुस का योगदान क्या है और ग़रीबी क्या वाक़ई कम हुई है? "सूक्ष्म ऋण" और ग़रीबी उन्मूलन में विश्व बैंक और आई.एम.एफ. की क्या दिलचस्पी है?

इन सवालों का जवाब जानने के लिए संक्षेप में बंगलादेश की आर्थिक स्थिति को जान लेना ज़रूरी है। बंगलादेश की आबादी करीब 14 करोड़ है जो बेहद ख़राब जीवन स्थितियों मे जीती है। एक हालिया अध्ययन बताता है कि 1983-84 में पुरुष खेतिहर मज़दूरों के लिए वास्तविक मज़दूरी 20 टका प्रतिदिन हुआ करती थी। 1991 में यह मात्र 4 टका बढ़कर 24 टका प्रतिदिन हुई और 1996 में यह एक टका घटकर 23 टका रह गयी। 2003 में यह बढ़कर 28 टका प्रतिदिन हुई। यानी 19 वर्षों में 8 टका प्रतिदिन की वृद्धि! यही अध्ययन बताता है कि आय असमानता 1990 के दशक में लगातार बढ़ती गयी है। तमाम रिपोर्टें बताती हैं कि बंगलादेश ने 20वीं सदी के आखिरी दशक से विचारणीय आर्थिक विस्तार और प्रगति की है। लेकिन इस पूरे दौर में आय असमानता लगभग दोगुनी हो गयी है। गाँवों में पूँजी के प्रवेश के साथ ही छोटी किसानी बेहद तेज़ी से उजड़ी है और तेज़ी से शहरों की ओर गयी है। लेकिन भारी पैमाने पर होने वाले इस विस्थापन ने बड़ी समस्याएँ पैदा कर दी हैं। बंगलादेश के पास अभी उद्योगों और विशेषकर, अवरचनागत और भारी उद्योगों का वह ढाँचा नहीं है जो इस भारी आबादी को औद्योगिक केन्द्रों और शहरों में खपा सके। शहरीकरण की रफ़्तार भी धीरे-धीरे बढ़ रही है लेकिन अभी उसमें भी इस विस्थापित आबादी को खपा पाने की ताक़त नहीं है।

नतीजतन, शहरों में सामाजिक असन्तोष बढ़ा है और अतिरिक्त आबादी को सम्भाल पाने में सरकार को काफ़ी दिक्कतें पेश आ रही हैं।

दूसरी तरफ़ यह समस्या सिर्फ़ आर्थिक ही नहीं है। बंगलादेश लगातार राजनीतिक अस्थिरता से होकर गुज़रा है। इसका शासक वर्ग अपने उदय के समय से ही संकट का शिकार रहा है। सत्ता के सभी प्रतिष्ठानों में भ्रष्टाचार नंगे रूप में राज कर रहा है। सरकार के वे सभी अंग जो काफ़ी प्रतिष्ठित माने जाते हैं, जनता के बीच अपनी प्रतिष्ठा खो चुके हैं। शासन के तमाम उपकरण लोगों के बीच परिहास का विषय हैं। यहाँ तक कि न्यायपालिका में भी भ्रष्टाचार के व्याप्त होने की ख़बरें मीडिया तक में छपीं। राजनीति पर लम्पट तत्वों, व्यापारी-कम-राजनीतिज्ञों का कब्ज़ा एकदम प्रत्यक्ष हो गया है। कुल मिलाकर सत्ता और शासन ने जनता के बीच अपना विश्वास खो दिया है।

इन दोनों, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं के चलते लोगों का गुस्सा अब सड़कों पर स्वतःस्फूर्त ढंग से फूटने लगा है। सड़कों पर होने वाले विरोध-प्रदर्शन अक्सर हिंस्र हो जाते हैं। ये विरोध-प्रदर्शन दिखने में गैर-राजनीतिक लगते हैं लेकिन यह सतह की सच्चाई है। इन सभी संघर्षों के दौरान ही लोगों की राजनीतिक चेतना में काफ़ी तब्दीली आती है। कभी-कभी तो ये स्वतःस्फूर्त प्रदर्शन इतने बड़े हो जाते हैं जितने कि चुनावी राजनीतिक पार्टियाँ भी नहीं कर पाती हैं। अधिकांश मामलों में इन संघर्षों में लोग किसी पूँजीवादी पार्टी की शरण की तलाश में नहीं रहते हैं बल्कि अपने संघर्ष के औज़ार खुद ही बनाते हैं। निस्सन्देह, ये संघर्ष जब-तब स्वयंस्फूर्त ढंग से होते हैं और ख़त्म हो जाते हैं। लेकिन शासक वर्ग भी इतिहास के सबक के जरिये यह जानता है कि ऐसे प्रदर्शन ही जनता की राजनीतिक चेतना का स्तरोन्नयन करते हैं और किसी क्रान्तिकारी अगुआ शक्ति को भी जन्म दे देते हैं। ऐसे में ये संघर्ष बिखरे और स्वतःस्फूर्त न होकर सचेतन और एकजुट हो जाते हैं। ऐसे में स्थिति काफ़ी विस्फोटक और ख़तरनाक हो सकती है। बंगलादेश एक छोटा देश है लेकिन उसकी जनसंख्या अच्छी-ख़ासी है। उत्पादक शक्तियों का विकास भारत जैसा नहीं है लेकिन बंगलादेश नेपाल जैसी स्थिति में भी नहीं है। ऐसे देश में कोई आमूल परिवर्तन विश्व पूँजीवाद के लिए ख़तरनाक साबित हो सकता है।

इसके अतिरिक्त बंगलादेश लूट और शोषण की सम्भावनाओं से युक्त एक पिछड़ा देश है। इस पर वित्तीय पूँजी की नज़र टिकी हुई है। तीसरी दुनिया के अपेक्षाकृत विकसित उत्पादक शक्तियों वाले देश का सत्ताधारी बुर्जुआ वर्ग अपने आपको

'एसर्ट' कर रहा है और बैंक-फण्ड-डब्ल्यू.टी.ओ. की नीतियों को अपनी ज़रूरतों के अनुसार लागू करने के लिए जद्दोजहद करता रहता है। यह साम्राज्यवादियों का जूनियर पार्टनर तो है, लेकिन उनके लिए सिरदर्द भी पैदा करता रहता है। हद से अधिक परेशान होने पर साम्राज्यवादी देश इन देशों के शासक पूँजीपति वर्ग की बाँह भी मरोड़ते हैं लेकिन ऐसा वे हमेशा नहीं कर पाते क्योंकि विश्व साम्राज्यवाद भी कई खेमों बँटा हुआ है और ऐसे में इन देशों के पूँजीपति वर्ग के सामने कई 'बार्गेनिंग ऑप्शंस' मौजूद होते हैं। ऐसे देशों में भारत भी शामिल है जिसका पूँजीपति वर्ग अपनी बढ़ती शक्तिमत्ता के अनुसार विश्व स्तर पर अधिशेष विनियोजन में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए मिनमिनाता रहता है और यह मिनमिनाहट धीरे-धीरे तेज़ हो रही है। ऐसे में विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व व्यापार संगठन तीसरी दुनिया में अब ऐसे और देश नहीं चाहते जिसका पूँजीपति वर्ग अपने आपको इस हद तक एसर्ट कर सके। इसलिए साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी बंगलादेश जैसे देशों में भी शोषण का अपना ढाँचा खड़ा करना चाहती है। लेकिन बंगलादेश में दिक्कत यह है कि ऐसा औद्योगिक ढाँचा नहीं है जिसका इस्तेमाल करके यह वित्तीय पूँजी यहाँ के सस्ते श्रम को निचोड़ सके। इसलिए बंगलादेश जैसे देशों में शोषण की कोई नयी प्रणाली ईजाद करने की आवश्यकता थी।

तो गाँव से लोग उजड़कर शहरों की तरफ़ पलायन कर रहे हैं; शहर इस आबादी को खपाने की कूव्वत नहीं रखता; गाँव के छोटे और ग़रीब किसान सूदखोरों का आसान शिकार बन रहे हैं; शहर और गाँव, दोनों ही जगह स्थितियाँ विस्फोटक। दूसरी तरफ़, वित्तीय पूँजी की बंगलादेश पर ललचाई निगाहें लेकिन लूटने के लिए कोई औज़ार नहीं।

ऐसे में पूँजीपति वर्ग के तारणहार मोहम्मद यूनुस का अवतरण होता है। ग्रामीण बैंक इन सभी समस्याओं के हल का नुस्खा सुझाता है। मोहम्मद यूनुस ने सुझाया और साबित भी किया कि विश्व बैंक के सूक्ष्म ऋण के जरिये बंगलादेश की ग़रीब ग्रामीण जनता को लूटा भी जा सकता है और उसे गाँव में रोका भी जा सकता है। नतीजतन, शहरों में गाँव के विस्थापितों के भर जाने के कारण शहरी जनता में जो असन्तोष है वह भी थमेगा और गाँवों में सूदखोरों के नंगे और भोंड़े शोषण की जगह ग्रामीण बैंक के जरिये वित्तीय पूँजी का "सभ्य" लेकिन उतना ही मुनाफ़ा देने वाला शोषण ले लेगा। सामाजिक अशांति का ख़तरा बढ़ाए बग़ैर शोषण की रफ्तार बढ़ाने का यह नुस्खा विश्व बैंक और आई. एम.एफ. को काफ़ी भाया और ग्रामीण बैंक की गाड़ी चल निकली। अब ज़रा यह देखा जाय कि यह ग्रामीण बैंक करता क्या है और कैसे करता है?

ग्रामीण बैंक के मंच पर पदार्पण के साथ ही लघु ऋण और सूक्ष्म ऋण वाली अन्य सभी एजेंसियाँ उससे आकर मिल गयीं। ग्रामीण बंगलादेश एक विशाल ऋण बाज़ार में तब्दील होने लगा। गाँव के ग़रीबों को सूक्ष्म ऋण के जरिये मालिकाने का भ्रम दिया गया। साथ ही उन्हें अधिशेष निचोड़ने की एक प्रणाली में डाल दिया गया। यानी एक तीर से दो भी नहीं, कई शिकार! यह कैसे होता है यह देखना काफ़ी दिलचस्प होगा।

ज़्यादातर लोग समझते हैं कि ग्रामीण बैंक कम ब्याज़ पर ऋण देता है। यह एक बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है। ग्रामीण बैंक 30 प्रतिशत ब्याज़ दर पर कर्ज़ देता है जिसे 52 किश्तों में चुकाना होता है। यह ऋण आम तौर पर "ग़रीबों में भी सबसे ग़रीब" नहीं ले पाता है जैसा कि प्रभुत्वशाली पूँजीवादी मीडिया ने प्रचारित किया है। अगर कम और आसान किश्तों पर ऋण देना पुरस्कार देने का कारण है तो यह पुरस्कार मास्टर कार्ड्स और वीज़ा कार्ड्स जैसी कम्पनियों को मिलना चाहिए जो अपने ग्राहकों से ऋण पर 18-20 प्रतिशत ही ब्याज़ लेती हैं। जबकि यह ऋण न लौटा पाने पर क्रेडिट कार्ड धारकों को आम तौर पर कुछ नहीं होता है। जबकि ग्रामीण बैंक से कर्ज़ लेने वाला छोटा या निम्न मध्यम किसान ऋण वापस करता ही करता है भले ही यह काम उसे अपना पेट काट-काटकर और अपने बर्तन-भांडे बेचकर ही क्यों न करना पड़े। वह पुलिस, कोर्ट-कचहरी आदि से भयाक्रान्त रहता है। उसे शहरी मध्य वर्ग जैसी तसल्ली नहीं रहती है। यह वर्ग आम तौर पर बैंक का कर्ज़ चुकाने के लिए सूदखोरों से कर्ज़ लेने को मजबूर होता है। चार-पाँच वर्षों तक दिवालियेपन की हालत में रहने का बाद यह वर्ग एक बार फिर सूक्ष्म ऋण के जरिये निचोड़ने लायक बन जाता है। ऋण लेने वाले ग़रीब इससे पहले कि शहर पलायन के बारे में सोचें, ऋण के जरिये फिर से गाँव में रोक लिये जाते हैं। उन्हें झूठी आशाएँ बंधाकर गाँव में रोके रखा जाता है। अपनी इच्छा से वैसे भी वे गाँव नहीं छोड़ना चाहते हैं और आम तौर पर मजबूरी में ही गाँव से उजड़कर शहर जाते हैं। ऐसे में वे भी आसानी से इस भ्रम की जाल में फँस जाते हैं और वित्तीय पूँजी के शिकार बनते रहते हैं। इस शिकार को साम्राज्यवादी पूँजी पूरी तरह मारती नहीं है बल्कि अधमरा करके छोड़ देती है और उसके फिर निचोड़े जाने की हालत में आने तक इंतज़ार करती है और फिर से अधमरा कर देती है।

गाँव में छोटी-ग़रीब किसानी को अधमरेपन के हालात में बनाए रखा जाता है। यह काम उनसे ब्याज़ के रूप में अधिशेष निचोड़कर किया जाता है। इसके साथ ही उन्हें गाँव में रोके भी रखा जाता है। यह गाँव की आबादी के सर्वहाराकरण को रोकता है। छोटी जोत की किसानी वैसे भी इन किसानों को नर्क जैसा ही जीवन देती है लेकिन जमीन के साथ आदिम जुड़ाव और ग्रामीण बैंक का सूक्ष्म ऋण इन्हें सर्वहाराकृत होकर शहर पलायित नहीं होने देता। नतीजतन, यह वर्ग जो दरअसल अर्द्धसर्वहारा और उजरती गुलाम की स्थिति में ही जी रहा होता है, मालिक किसान होने के भ्रम में जीता रहता है और उसकी वर्ग चेतना कुन्द ही बनी रह जाती है। लुटता वह सर्वहारा वर्ग की तरह ही है, लेकिन संगठित उसकी तरह नहीं हो पाता। यही काम तमाम एन.जी.ओ. सुधारवादी, संशोधनवादी पार्टियाँ और पर्यावरणवादी आदि कर रहे हैं। यूनुस ने इस काम में एक और फ़ायदा जोड़ दिया है—मुनाफ़े का फ़ायदा! ऋण लेने वाला एक उजरती मज़दूर

(पेज 36 पर जारी)

ग़रीबी का व्यापार और उसका पुरस्कार

(पेज 8 से जारी)

में तब्दील हो जाता है जो ब्याज़ के रूप में नियमित और पक्का 'रिटर्न' देता है। ग्रामीण बैंक का कर्ज़दार एक बंधुआ मज़दूर होता है जिसके उत्पादन और उत्पादन के परिमाण के बारे में फैसला बैंक लेता है। वे ग़रीब जिन्हें औद्योगिक पूँजी सीधे-सीधे अपने शोषण के जुवे तले नहीं ला सकती थी, उन्हें सूक्ष्म ऋण के जरिये सूदखोर वित्तीय पूँजी एक बंधुआ माल उत्पादक बना लेती है। ग्रामीण बैंक के ऋण जाल में अब तक 4,059,632 लोग फँस चुके हैं। यह जाल 48,472 गाँवों तक फैल चुका है। इसके जरिये अब तक 2173139 लाख टका कर्ज़ दिया जा चुका है। फिलहाल, यह व्यवस्था गाँवों में अधमरी हालत में छोटे ग़रीब किसानों को रोकने, शहर में जनसंख्या के अत्यधिक दबाव को रोकने, सर्वहाराकरण और राजनीतिक स्तरोन्नयन की प्रक्रिया को धीमा करने, और वित्तीय पूँजी को बंगलादेशी जनता को लूटने के नये तरीक़े मुहैया कराने में सफल दिख रही है। लेकिन यह बहुत दिन तक अपने इन कार्यों को नहीं अंजाम दे पाएगी। यह बरबादी की ताल को बस विलम्बित कर सकती है, रोक नहीं सकती। कुल दरिद्रीकरण के साथ ऋण चुकाने में अक्षम रहने वाले कर्ज़दारों की संख्या में बढ़ोत्तरी होगी और नियमित 'रिटर्न' का ग्रामीण बैंक का पैटर्न गड़बड़ा जाएगा। यह प्रक्रिया शुरू होने के संकेत भी मिलने लगे हैं। दूसरी सम्भावना, जो पहले ही हक़ीकत में तब्दील होना शुरू हो चुकी है, वह यह है कि ग्रामीण बैंक का ऋण चुकता करने के लिए किसान गाँव के सूदखोरों से ऋण लेकर अपनी ज़मीनें गवाँएँगे और अंततः उजड़कर शहर जाएँगे। होना वही है जो हो रहा था, मगर थोड़ी देर से। बस इस मोहलत को मुहैया कराने के लिए मोहम्मद यूनुस को शांति का नोबेल पुरस्कार दिया गया है। अर्थशास्त्र में तो उनका कोई योगदान वाकई नहीं था क्योंकि सूक्ष्म ऋण और सूदखोरी पूँजीवाद का कोई नया आविष्कार थोड़े ही है। पूँजीवाद तो जन्म से ही सूदखोरी कर रहा है। इसमें कोई नयापन नहीं है। इसलिए मोहम्मद यूनुस को शांति का नोबेल मिलना लाज़िमी ही था। पूँजीवाद को मुर्दा शांति प्रिय है और कुछ समय तक ऐसी मुर्दा शांति बनाए रखने का नुस्खा यूनुस ने खूब सुझाया है। तो शांति के नोबेल का यूनुस से अधिक अधिकार और कोई था भी नहीं!

अब कुछ सवाल जिनका उत्तर आप खुद सोचें!

1. कुख्यात साम्राज्यवादी बीज कम्पनी मोन्साण्टो सूक्ष्म ऋण और यूनुस भाई की इतनी बड़ी समर्थक क्यों है?

2. ग्रामीण बैंक बंगलादेश सरकार को कोई टैक्स क्यों नहीं देता है?

3. नार्वे की नॉर्टेल कम्पनी के साथ साझेदारी वाली यूनुस की सेलफोन कम्पनी ग्रामीण फोन सरकार को कोई टैक्स क्यों नहीं देती?

4. क्या इस पुरस्कार और यूनुस के नार्वेइयाई फोन कम्पनी नॉर्टेल के साथ समझौते के बीच कोई रिश्ता है?

5. नॉर्टेल बिना कोई टैक्स दिये बंगलादेश से लाखों डॉलर नार्वे कैसे ले जा रही है?

6. यूनुस ने मोंसाण्टो बीज बंगलादेश में लाने का प्रयास क्यों किया था जिसे विरोध के कारण उन्हें वापिस लेना पड़ा? क्या उन्हें पता नहीं था कि मोंसाण्टो टर्मिनेटर बीज बेचता है जिसकी फसल से दुबारा उत्पादन के लिए बीज प्राप्त नहीं किये जा सकते और फिर से कम्पनी से बीज ख़रीदना पड़ता है?

7. अगर सूक्ष्म ऋण से ग़रीबी दूर हो पाती तो लाखों बंगलादेशी दुबई, सऊदी अरब, कुवैत या सिंगापुर क्यों जा रहे हैं? अगर 50-60 डॉलर कर्ज़ लेकर ग़रीबी दूर हो सकती, तो वे लाखों टके कर्ज़ लेकर बाहर बेहद बुरी कार्य स्थितियों में काम करने क्यों जा रहे हैं? क्या वे सभी मूर्ख हैं?

आह्वान यहां से प्राप्त करें

उत्तर प्रदेश ■ जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर ■ जनचेतना, 16/6, वाद्यम्बरी हाउसिंग स्कीम, अल्लापुर, **इलाहाबाद** ■ विजय इन्फार्मेशन सेण्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर** ■ जनचेतना स्टाल, कॉफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ** (शाम 5 से 8.30 तक) ■ प्रोग्रेसिव बुक सेण्टर, विश्वनाथ मन्दिर गेट, बी.एच.यू. परिसर, **वाराणसी** ■ जनचेतना ठेला, चौड़ा मोड़, **नोएडा** (शाम 5 से 8) ■ शहीद पुस्तकालय, द्वारा डा. दूधनाथ, जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, **मऊ** **दिल्ली** ■ अभिनव सिन्हा, बी-100, मुकुन्द विहार, करावल नगर ■ शिवानी कौल, रूम न. -307/2, मेघदूत हॉस्टल, नॉर्थ कैम्पस, दिल्ली विश्वविद्यालय ■ प्रसेन, रूम न.-3, ए-67, क्रिश्चियन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, दि.वि.वि., ■ सत्यम, सी-74, दिव्यज्योति अपार्टमेंट, सेक्टर-19, रोहिणी ■ गीता बुक सेंटर, **जे.एन.यू.** ■ बुक कार्नर, श्रीराम सेंटर, **मंडी हाउस** ■ शिवार्थ, रूम न.-86, हिन्दू कॉलेज हॉस्टल, नॉर्थ कैम्पस, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-7 **बिहार** ■ पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना** ■ रामनारायण राय, द्वारा राघव पटेल कपड़े की दुकान, साहेबगंज, पोस्ट करनौल, जिला-**मुजफ्फरपुर** **बंगाल** ■ बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कोलकाता** ■ जनार्दन थापा, लुकसान बाजार, पो. करेन, जि. **जलपाईगुड़ी** ■ राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मन्दिर, प्रधाननगर, **सिलीगुड़ी** **मध्य प्रदेश** ■ चिंचोलकर बुक हाउस, बस स्टैण्ड, जगदलपुर, **बस्तर** **महाराष्ट्र** ■ पीपुल्स बुक हाउस, 15, कावसजी पटेल स्ट्रीट, फोर्ट, **मुम्बई** **पंजाब** ■ सुखविन्दर, 154, ओम बेकरी के सामने, शहीद करनैल सिंह नगर, फेज़-3, पखोवाल रोड, लुधियाना